बापू

tस्वीरें: माधवी पारेख
लेखक: उमाशंकर जोशी
अनुवाद: वर्षा दास
प्रकाशक: सहमत
गांधीजी की जो कानून अपनी अंतराल के विरुद्ध लगते थे, उनका देव पूरे आत्मवाद से विरोध करते थे। लेकिन जब वे जेल में होते थे तब, छोटे से छोटे कानून का भी दिल पालन करते थे।

दक्षिण अफ्रीका में उन्हें कड़ी भविष्य के कारावास की सजा मिली थी। दरबारों की सलाहों को राजकार साफ करने का काम, साहित्य बांटने तक खड़े-खड़े करते थे। फर्ष साफ करना, जमीन खोदना, सिलाइ की मशीन से टोपी सीना, कविता बुनाना, इस प्रकार के कई काम करते थे। सिर्फ़ करते ही नहीं थे, पूरी उम्मीद से करते थे। कविता बुनने का काम, बंद फाटी में बैठकर करना पड़ता था। शाम तक कमर दुखने लग जाती थी। आंखों को भी तकलीफ होने लगी। लेकिन बाद में कुली हवा में बैठकर काम करने की अनुमति मिलने से, स्वास्थ्य अधिक बिगड़ने से बच गया।

एक बार एक मजेदार घटना घटी।

गांधीजी की उड़ीम का या ऐसा ही कुछ काम सीमा गया था। अधिकतर, हिंदी-ईन्लाइन को, कंकड़ लीडर के काम पर लगाया जाता था। गांधीजी दरोगा के कहते थे कि उनको भी उसी काम पर लगाया जाय। लेकिन बड़े दरोगा ने हक दिया था कि गांधीजी को जेल से बाहर नहीं निकलना है। एक दिन गांधीजी के पास जो काम था वह पूरा हो गया तो वह पूरे पक्ष नहीं लगे। लेकिन कौन ने नहीं कहा तो कोई न कोई काम करते रहना चाहिए। दरोगा ने पूछा: “आज आप बीमार हैं क्या?”

गांधीजी: “जी नहीं।”

दरोगा: “तो फिर आप काम क्यों नहीं करते?”

गांधीजी: “मेरे पास जो काम था वह सारी मेरी में कर लिया। मैं काम का विकास करना नहीं चाहता। आप काम लेंगे तो मैं खुशी से करूंगा। नहीं तो खाली पढ़ा रहूंगा। कुछ गलत तो नहीं कर रहा!”

दरोगा: “वह तो ठीक है, लेकिन जब वह दरोगा या गवर्नर आए, तब आप का स्टोर में रहना ठीक होगा।”

गांधीजी: “मैं ऐसे नहीं कर सकता। मैं गवर्नर से भी कहूंगा कि यहां पर्याप्त काम नहीं है। इसलिए, मुझे कंकड़ लीडर के लिए भेजा जाय।”

यों दिन के बाद गवर्नर आए। गांधीजी ने उनको सारी बात बताई। गवर्नर ने कंकड़ लीडर के लिए बाहर जाने की अनुमति नहीं दी... और भी नहीं कहा: “आपको उसकी जानत नहीं है क्यों कि, कल आपको दूसरी जेल में भेजा जाएगा।”
इतने कामों के बीच भी बापू हर रोज सुबह एक घंटा सैर करने के लिए निकल ही जाते थे। वे जिनको अपना रजनीतिक गुरू मानते थे वे गोरखेजी, सैर करने नहीं जाते थे। उनका स्वास्थ्य कुछ नैसा ही रहता था। बापू अदब में रहकर इसके प्रति नाराजगी भी दिखाते थे।

वे जब आश्चर्य से सैर करने निकलते थे तब साथ में कई लोग जुड़ जाते थे। कोई खास बात करने के लिए समय चाहता तो बापू उसे मुलाकात के लिए टड़के सुबह सैर का समय भी दे देते थे। वे चलते जाते और बात भी करते जाते।

लेकिन बापू पर सबसे पहला हक कवियों का रहता था। बापू उनके साथ शरारत भी करते थे।

एक बार एक शरारती बालक ने पूछा: “बापू, एक बात पूछू?”

बापू ने हांसी भरी। तब जूरा आगे निकलकर उनकी ओर देखकर उसने पूछा: ““

“अहिस्ता का अर्थ चाहे है ना कि दूसरे को दुख न देना?”

बालक ने गंभीरता से सवाल पूछा था।

बापू ने कहा: “सती है।”

बालक ने एकदम से उनको पकड़ लिया: “तब आप हंसते-हंसते जो हमारे गाल पर चिंटियाँ भर लेते हैं उसे, हिंसा कहेंगे या अहिस्ता?”

बापू बोले: “दहर जा, शैलातन कहीं का!” और उसे पकड़कर जोर से चिंगिरी भरी।

सारे बच्चे हंस - हंसकर तलियाँ बजाने लगे: “बापू को चिढ़ाया! बापू को चिढ़ाया!”

लेकिन इन सभी में सबसे ऊंची खिलखिलाती हंसी स्वयं बापू की थी!
बापूजी को सरकार ने एपेन्दियोस टिस्स के ऑपरेशन के बाद अभी जेल से छोड़ा नहीं था।

उनके मित्र दीनबंधु एन्ड्रूज़ उनसे मिलने पूरा आ पहुँचे थे। सबके साथ ले एन्ड्रूज़ चाय पीए, बापू के पास सरकारी अस्पताल में जाकर बैठ गये।

उन्होंने हंसकर बापू से कहा: "देखिए, मैं कितना संयम रहा हूँ! आज चाय पीए बैगेर ही आ गया।"

बापू: "क्यों?"

एन्ड्रूज़: "आपके पास दो पतल जल्दी आकर बैठने के लिए।"

बापू ने मधुरता से व्यंग्य किया। "यानि एक इच्छा का ल्याग किया। लेकिन दूसरी इच्छा के कारण ही ल्याग कर पाये हो ना?" और दोनों महानुभव खिलखिलाकर हंस पड़े।
एक दिन प्रभावती बहन कूददान के कागज़ों के बीच कुछ ढूंढ रही थी। कस्तूरबा ने उनको देखा। पास जाकर पूछा: “बहन, क्या कर रही हो?”

प्रभावती: “बा, एक हरे रंग का छोटा सा कागज ढूंढ रही हूँ।”

बा: “किस चीज़ का कागज है जो इतना ढूंढ रही हो? किसी लेख का है?”

प्रभावती: “नहीं, आँखों पर प्रकाश न लगे इसलिए, लालटेन की बाती के आड़े रखने का छोटा हरा कागज है। बापू का है। लालटेन साफ करते समय मुझे से गिर गया। यहीं होना चाहिए, इसलिए ढूंढ रही हूँ।”

बा गईं, सीधी बापू के पास। बापू के साथ लड़ने झगड़ने का, उनका अधिकार था। वह तो बापू पर बरस पड़ी। “क्यों इस बिचारी छोटी लड़की को परेशान कर रहे हो? कागज़ के एक छोटे से टुकड़े को कब से ढूंढ रही है!”

बापू: “छोटा टुकड़ा है, बात सही है। लेकिन इसका मतलब यह तो नहीं कि वह काम का नहीं रहा। वह अपनी जगह पर बहुत ही काम की था। उसे फेंकने की क्या जरूरत है? उसे ढूंढकर अपनी जगह पर रखना चाहिए। उसे ढूंढने दो। ठीक ही कर रही है!”

प्रभावती को कागज़ निल गया। उसे ठीक जगह पर रखा गया।
बातावरण में आनंद और बढ़ गया।
सफर के दौरान गांधीजी एक आश्रम-विद्यालय में गये थे। बारिश हो रही थी। सुबह बच्चे देर से आये। गांधीजी को कहीं और जाना था। बच्चों के साथ वे थोड़े ही मिनट बिता पाये।

गांधीजी ने बात शुरू की: "तुम सब कहाँ करते हो और खादी पहनते हो। लेकिन मुझे यह बताओ कि तुममें कितने हफ्ते हुए हो, यानि कि कभी भी झूठ नहीं बोलते।"

कुछ बच्चों ने हाथ ऊपर उठाये।

गांधीजी ने दूसरा सवाल पूछा: "अच्छा, अब बताओ कि कभी-कभी झूठ बोलनेवाले कौन-कौन हैं?"

दो बच्चों ने फौरन हाथ ऊपर किया।

फिर तीन ने....

फिर चार ने....

फिर तो हाथ ही हाथ दिखाने लगे। प्रायः सभी बच्चों ने हाथ ऊपर उठाये थे।

गांधीजी ने उनसे कहा: "जो बच्चे जानते हैं और कबूल करते हैं वे कभी-कभी झूठ बोलते हैं, उनके लिए हमेशा उम्मीद बनी रहेगी। जो मानते हैं कि वे कभी झूठ नहीं बोलते, उनका रास्ता कठिन है। मैं दोनों की सफलता चाहता हूँ।"
फीनिक्स के स्कूल में बच्चों की निबंध लिखने के लिए कहा गया। विषय था: “पहला सत्याग्रही कौन?”
किसी ने कहा, थंबी नायडू पहला सत्याग्रही था। उसने दक्षिण अफ़्रीका की लड़ाई में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।
दूसरे ने कहा, नहीं नहीं, पहले सत्याग्रही तो बापूजी स्वयं थे।
तब तीसरे ने नारायणस्वामी को पहला सत्याग्रही बताया, जिनका निर्वासन में देहांत हो गया था।
निबंध जांच कर लौटाये गये। “ढीक है”, ऐसा प्रमाणपत्र भी मिला।
लेकिन बापू ने सभी को अनुत्तीर्ण ठहराया।
सभी के दिमाग चककर खा गये। आखिर पहला सत्याग्रही कौन हो सकता है?
बापू ने सब को बताया: “पहला सत्याग्रही थंबी नायडू नहीं, भक्त प्रहाद था।”
यानि बापू कोई नई बात नहीं कह रहे थे। केवल उन से पहले जो महान सत्याग्रही रहे थे, उन का अनुसरण कर रहे थे। बापू ज़िंदगी भर एक बात बड़े आग्रह के साथ कहते थे: “मुझे कोई नई बात नहीं कहनी है। सत्य और अहिंसा परवर्ती जितने पुराने हैं!” वास्तव में वे सत्य-अहिंसा को, मानव जीवन के आज के संदर्भ में आचरण में ढालकर दिखा रहे थे — जीकर दिखाते थे। उनकी यही अनोखी मैलिकता थी।
प्रभावती: “बापूजी, आप शाम को टहलते समय हम सब के कर्णों पर हाथ रखकर चलते थे। अब ऐसा क्यों नहीं करते?”

बापू: “देखो ना, कई लोग सोचते हैं कि मुझे लड़कियों के कर्णों पर हाथ रखकर नहीं चलना चाहिए।”

प्रभावती और अन्य लोग इस बात को समझ नहीं पाएं कि लोग, ऐसा क्यों सोचते होंगे?

तब बापू ने कहा: “मैं तो चला जाऊंगा, लेकिन तुम लड़कियों मेरे जीवन की साक्षी बनी रहोगी।”

सालों पहले कहे गये थे शब्द बापू के चले जाने के बाद प्रभावती बहन आज, दिल को छू जाने वाली भावुकता से याद करती हैं।
साबरमती आकाश में शाम की प्रार्थना समाप्त हुई। साबरमती नदी का पानी किनारे से रागकर कल कल चढ़ रहा है।

आकाश में बसंत की पूनम का चंद्र खिला है।

प्रार्थना के बाद एक बिस्तर में तकनी पर दाहिना हाथ दिखाकर गांधीजी लेटे हैं। शरीर खुला है। कहीं ठंड न लग जाय, सोचकर वा उनकी एक चहर की दो तह लगाकर आझै हैं। आधी चहर पीठ के पीछे है।

सामने राजीभाई बैठे हैं। बात करते करते राजीभाई की नजर पीठ को ढूंढ रही सफेद चहर की काली छाप पर पड़ती है। ओर, कला सांप! सांप चहर के ऊपर से गंधीजी की पीठ पर चढ़कर दूसरी ओर उतरने के लिए गर्दन आगे करता है।

राजीभाई का ध्यान बात में नहीं है। वह देखकर और खुद भी कुछ महसूस करके गंधीजी पूछते हैं: “क्या बात है?”

राजीभाई की सांप ऊपर की ऊपर रह गई। गंधीजी आगे हिलीं तो सांप डंस जागा। यदि घबराकर कुछ कहेंगे तो वहां बैठे सारे दीर्घ जागे। वे शरीर से बोले: “कुछ नहीं। एक सांप है।”

सुनकर वह इतने चिंतित से उड़े हो गये, लेकिन गंधीजी और राजीभाई सहर हैं। सांप आगे बढ़ नहीं रहा, लेकिन चंदनी में कही जाता हुआ भी दिखाई नहीं दिया। कहीं पीठ और चहर के बीच में तो नहीं छुप गया? राजीभाई ने शरीर से कहा: “बाबूजी, आप बिलकुल नहीं हिलाना।”

“मैं नहीं हिलाऊँ। लेकिन आप संभल के रहना।”

राजीभाई चहर उठते हैं। कहीं कहना है। चहर का ताकत लगाकर दूर पड़े हैं। चहर में से सांप बाहर आता है। राजीभाई और दूसरे लोग उसे पकड़ते हैं और दूर पड़े आते हैं।

अवधार में खबर छो: “महावानी के मस्तक पर नाग का फन”। एक लोक मान्यता ऐसी है कि नाग जिस मानव के मस्तक पर फन फैलाता है वह, चककता बन जाता है। कुछ लोगों ने ऐसा भी कहा कि नाग ने गंधीजी की पीठ पर फन फैलाया इसलिए, वे देख के नेता बने रहे, यदि मस्तक पर फैलाया होता तो पूरी दुनिया के नेता बन जाते। ये सब चमकता की बातें किवड़तियां बन गई। लेकिन गंधीजी और नाग की घटना में सबसे बड़ा चमकता तो यह था कि वे पूरे धर्म के साथ, शांत मन से, एक रॉमांटिक तक हिलाये बिना जिस स्थिति में थे, वैसे के वैसे लेते रहे।
गांधीजी अफ्रीका से हाल ही में लौट थे। बंबई में महासभा हुई थी। काका साहब कालेलकर गांधीजी के निवास पर जाकर उनके काम में मदद कर रहे थे।
एक बार गांधीजी टेबल के आस-पास कुछ ढूंढ रहे थे। काका साहब ने पूछा: “क्या ढूंढ रहे हैं?”
“मेरी पेन्सिल। छोटी-सी है।”
उनका समय और तकलीफ बचाने के लिए काका साहब अपनी जेब से पेन्सिल निकालकर देने लगे।
“नहीं, नहीं, मुझे तो मेरी वह छोटी पेन्सिल ही चाहिए।”
काका साहब ने बिनती करते हुए कहा: “आप यह पेन्सिल लीजिए। आपकी पेन्सिल में ढूंढता हूं। बेकार में आप का समय बर्बाद हो रहा है।”
वापू: “वह छोटी पेन्सिल में खो नहीं सकता। क्या आप जानते हैं वह पेन्सिल मुझे मदरास में नटेसन के छोटे बेटे ने दी थी। कितने प्यार से वह पेन्सिल लाया था! मैं उसे कैसे खो सकता हूं?”
फिर दोनों ने मिलकर उसे ढूंढा। आखिर वह मिली। दो इंच से भी छोटा तुकड़ा था।
लेकिन उसके पीछे उस नन्हे बालक का उत्साह था। महासा के इश्वर ने उसे कितने आदर के साथ संभाला था!
नत्ता मोहन स्कूल के बाद सीधा घर की ओर भागता था। आस-पास कुछ देखता ही नहीं था।

वह सोचता, “कोई मेरा मज़ाक उड़ायेगा तो?” स्कूल खुलते ही पहुँच जाना, खतम होते ही घर लौट आना — यही था उसका रोज़ का क्रम। स्वभाव से बहुत ही शर्मिला। काम से न काम। न कोई देस। न किसी से बात-चीत।

शिक्षक के प्रति आदरभाव रखता था। शिक्षक को धोखा देने का तो सवाल ही नहीं था।

हाईस्कूल में परीक्षा चल रही थी। इन्स्पेक्टर जाइल्स स्कूल की जांच करने आये थे। उन्होंने विद्यार्थियों से अभेजी के पांच शब्द लिखवाये। मोहन ने Kettle (केटल) शब्द की वर्तनी गलत लिखी। शिक्षक ने जूते की नैक से टेल कर उसे सावधान किया। लेकिन वह कहां सकते होने वाला था? वह इस बात को मानने के लिए तैयार ही नहीं था कि शिक्षक उसे, दूसरे विद्यार्थियों की स्लेट में देखकर वर्तनी ठीक करने को कह सकते हैं। उसे लगा कि विद्यार्थी एक दूसरे की स्लेट से नकल न करे यह देखने के लिए ही शिक्षक चककर काट रहे थे।

सभी विद्यार्थियों के पांच शब्द शाही निकले। अपने मोहनजी अकेले बुझू सीखत हुए।

बाद में शिक्षक ने मोहन को उसकी ‘मूर्खता’ के बारे में समझाया। लेकिन वह लिखता है: “मेरे विद्याग पर उनके समझाने का कोई असर नहीं पड़ा। दूसरे लड़कों से चोरी करना मुझे कभी नहीं आया।”
गांधीजी सवेरे जलदी उठ जाते थे। उठकर मुंह धोना और दांत गंजाना। इसके लिए पानी की छोटी लोटी और फीकदारी बिस्तर के पास ही रहती थी। उसी से काम निपटा लेते थे।
मोहनलाल पंड्या ने कहा: "बापू, पानी की कमी है क्या? यहां साबरमती बह रही है। पानी की इतनी किफायत क्यों कर रहे हैं?"
गांधीजी ने उलटा सवाल किया: "भेला चेहरा आप को ठीक से साफ किया दिख रहा है या नहीं?"
पंड्याजी बोले: "हां, सो तो है!"
गांधीजी: "तो फिर विकट क्या है? आप कई लोटे भर-भर कर पानी का प्रयोग करते हैं, लेकिन गीले हाथों से चेहरे पर पानी लगाते हैं। मैं पानी से चेहरा साफ करता हूँ। इतना पानी काफी है।"
पंड्याजी: "लेकिन नदी में कितना सारा पानी है, और......"
गांधीजी: "नदी का पानी किसके लिए है? क्या मेरे अकेले के लिए है?"
पंड्याजी: "सभी के लिए है। आपके लिए भी है....."
गांधीजी: "ठीक कहा। नदी का पानी पशु, पक्षी, जीव-जंतु सभी के लिए है। केवल मेरे अकेले के लिए नहीं। मैं अपने जकरत का पानी ले ही लेता हूं। लेकिन उससे अधिक लेने का मुझे हक नहीं है। साथी मिलिक्यात में से हम जकरत से ज्यादा कैसे ले सकते हैं?"
एक युवक की बापू से स्वयं मिलने की बड़ी इच्छा थी। उसने पत्र लिखा और मुलाकात के लिए समय मांगा।

बापू ने जवाब दिया, “आप इतनी दूर से यहां सेवाग्रह में मिलने आएंगे। इतना सारा खर्च करने की क्या जरूरत है?”

युवक समझदार था। उसने बापू की बात मान ली। मिलने की इच्छा पर काबू पाया।

कुछ समय बीतने के बाद युवक ने लिखा कि उसे किसी काम से कलकत्ता जाना है। यदि मुलाकात का समय मिल जाय तो वह बीच में वर्षा स्टेशन पर उतरकर, थोड़ी देर के लिए सेवाग्रह हो आना चाहता है।

बापू का पत्र तुम्हारे फैसले के बीच उन्होंने, उस युवक को मुलाकात के लिए बारह बने, एक मिनट का समय दिया।

भिंति समय पर यह युवक सेवाग्रह में बापू की कुटिया में दाखिल हुआ। मुलाकात शुरू हुई।

बापूजी: “कताई करते हो?”

युवक: “जी नहीं!”

बापूजी: “तो करो।”

युवक क्रूरतात्मक गया था ना। वह उसकी सहायता की कसौटी थी। या फिर उसकी चेतना कोई आकार लेने की कोशिश कर रही थी और बापू की ओर मुड़ी थी? बापू ने उसे रात्रा दिखाया। उस की उम्मीद है। बापू ने उसे छोटे छोटे मंत्र रोए जीवननर्म की मोहर लगाय दी।

युवक उन तीन सहन शब्दों का गहरा मर्म समझने की कोशिश में डूब गया। तब बापू के प्यार भरे शब्द सुनाई दिये: “आपका एक मिनट समाप्त हो चुका है!”

लेकिन यह कैसा मिनट!
बालक मोहन अंधेरे में अकेला जाने से डरता था। उस का दिल फड़फड़ते लगता था। उस नहीं बालक को लगता था कि दाई ओर से भूत आ जायेगा और बाई ओर से ग्यात।

एक बार अंधेरे में अकेले जाना था। लेकिन मोहन क्यों जाता? नहीं मोहन तो डरते नहीं, पास ही घर की दाई रंभा खड़ी थी। उसने दीर्घ से कहा:
“डरते क्यों हो? अंधेरा हो या और कुछ भी हो, हम अगर राम का नाम लेते हुए चलते रहें तो कोई बाल भी बांका नहीं कर पाएगा। मोहन फौरन आये बढ़ा।
उसकी ज़बान पर ही नहीं, दिल में भी राम के नाम की रट थी।
उस दिन से मोहन निदर होकर चारों ओर घूमने लगा। जिसे राम का साथ हो उसे भला डर किस बात का?

रामनाम के उच्चारण से मोहन इतना निदर बन गया कि उसने चालोस करोड़ हिंदुवालियों को — मानव मात्र, को निदरता से जीने की राह दिखा दी।
अंतिम क्षण में भी ज़बान पर एक ही शब्द था — राम।